समणी निर्देशिका भावितप्रज्ञाजी, विपुल प्रज्ञाजी,
नुतनप्रज्ञाजी, मुकुलप्रज्ञाजी - समणी सेन्टर भायंदर

बारह भावना

अनित्यभावना : संयोग क्षणभंगुर सभी, पर आत्मा ध्रुवधाम है ।
पर्याय, लयधर्मा परन्तु द्रव्य शाश्वत धाम है ।
इस सत्य को पहचानना ही भावना का सार है ।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है ।।१।।

अशरणभावना : जिंदगी एक पल कभी कोई बढा नहीं पायेगा।
रस रसायन सुत सुभट कोई बचा नहीं पायेगा।
सत्यार्थ है बस बात यह कुछ भी कहो व्यवहार में।
जीवन मरण अशरण शरण कोई नहीं संसार में ।।२।।

संसार भावना : संसार है पर्याय में निज आत्मा ध्रुवधाम है ।
संसार संकटमय परन्तु आतमा सुख धाम है ।
सुखभाव से जो विमुख यह पर्याय ही संसार है ।
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है ।।३।।

एकत्व भावना : एकत्व ही शिव सत्य है, सौन्दर्य है एकत्व में ।
स्वाधीनता सुख शांति का आवास है एकत्व में ।
एकत्व को पहचानना ही भावना का सार है ।
एकत्व की आराधना आराधना का सार है ।।४।।

अन्यत्व भावना : निज देह में आतम रहे, वह देह भी जब अन्य है ।
तब क्या करे उनकी कथा, जो क्षेत्र से भी भिन्न है ।
जो जानते इस सत्य को, वे ही विवेकी धन्य हैं ।
ध्रुवधाम की आराधना की बात ही कुछ अन्य है।।५।।

अशुचि भावना : इस देह के संयोग में जो वस्तु पल भर आयेगी ।
वह भी मलिन मल मूत्रमय दुर्गन्धमय हो जायेगी ।
किन्तु रह इस देह में निर्मल रहा जो आत्मा।
वह ज्ञेय है श्रध्देय है बस ध्येय भी वह आत्मा ।।६।।

आश्रव भावना : संयोगजा चित्तवृत्तियां भ्रमकूप आश्रव रुप हैं ।
दु:ख रुप है दु:ख करण हैं अशरण मलिन जड रुप हैं।
संयोग विरहित आतमा पावन शरण चिद्ब्रुरुप हैं ।
भ्रमरोगहर संतोषकर सुखकरण सुखरुप है ।।७।।

संवरभावना : मैं ध्येय हूँ, श्रध्देय हूं, मैं ज्ञेय हूं, मैं ज्ञान हूँ।
बस, एक ज्ञायक भाव हूँ मैं, मैं स्वयं भगवान हूँ ।
यह ज्ञान यह श्रध्दान बस यह साधना आराधना
बस यही संवरत्व है, बस यही संवर भावना ।।८।।

निर्जरा भावना : शुध्दात्मा की रुचि संवर साधना है निर्जरा ।
ध्रुवधाम निज भगवान की, आराधना है निर्जरा।
वैराग्यजननी बंध की विध्वंसनी है, निर्जरा ।
है साधकों की संगीनी आनंदजननी निर्जरा ।।९।।

धर्मभावना निज आत्मा को जानना पहिचानना ही धर्म है।
निज आत्मा की साधना आराधना ही धर्म है।
शुद्धात्मा की साधना आराधना का मर्म है।
निज आत्मा की ओर बढती भावना ही धर्म है

लोकभावना : निज आत्मा के भान बिन, षड् द्रव्यमय इस लोक में ।
भ्रमरोगवश भव-भ्रमण करता रहा त्रैलोक्य में ।
निज आत्मा ही लोक हैं, निज आत्मा ही सार हैं ।
आनंदजननी भावना का, एक ही आधार है ।।११।।

बोधिदुर्लभ : नर देह उत्तमदेश पूरण आयु शुभ आजीविका ।
दुर्वासना की मंदता, परिवार की अनुकूलता ।
सत्सज्जनों की संगति, सद्धर्म की आराधना।
है उत्तरोत्तर महादुर्लभ आत्मा की साधना ।।१२।।